अध्याय 26

परमात्मा और सत्गुरु की आशीषें

अध्यात्म का रास्ता कोई आसान मार्ग नहीं जिस पर आसानी से चला जा सकता हो। यह जोख़िम से भरा, कठिन और टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता है।

कठोपनिषद में हमें मिलता है :

उत्तिष्ठत जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिना दुरत्यया, दुर्गमपथस्तत् कवयो वदन्ति।।

(उठो, जागो और गुरु की शरण में जाकर जागृति को प्राप्त करो। यह रास्ता छुरे की धार के समान तेज़ है जिस पर चलना बड़ा कठिन है- ऐसा विद्वान लोग कहते हैं।)

प्रसिद्ध मुस्लिम दरवेश शेख़ फरीद फरमाते हैं :

उठ फरीदा गवण कर दुनिया भालण जा।
मत कोई बख्शेया तै मिले तूं भी बख्शेया जा।।

(ऐ फ़रीद! उठ और किसी वली अल्लाह की तलाश में सारी दुनिया ढूंढ क्योंकि केवल तभी तुम बख्शे जा सकते हो।)

पवित्र कुरान शरीफ में इस रास्ते को 'पुल-ए-सिरात' कहा गया है और 'उस्तरे की धार जैसा तेज़' और 'बाल जैसा बारीक' बताया गया है।

भाई गुरदास भी कहते हैं कि गुर-सिक्खी (सत्गुरु का मार्ग) 'बाल से भी बारीक और उस्तरे की धार से भी तेज़' है :

बालों निक्की खंडेयों तिक्खी इत दवारे जावणा।

बाइबल में आता है:

क्योंकि जो रास्ता और दरवाजा जीवन की ओर जाता है वह तंग है, इसी लिये बहुत कम व्यक्ति ऐसे हैं जो इसको पाते हैं।

- मत्ती 7:14 (बाइबल)

वेदों में भी यौगिक आसनों और साधनों के लिए अनगिनत विधियों और संयमों का जिक्र आता है जो इतने कठिन हैं कि उन्हें सोच कर ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

इतनी कठिनाइयों के होते हुए यह मिट्टी का पुतला, जो निर्बल है, मन-माया के चंगुल में फँसा है, अंधी कामनाओं के जंजाल में उलझा हुआ है, कामना, क्रोध, लोभ, लंपटता और अहंकार से भरा हुआ है, अपने आप आसानी से कैसे इस आध्यात्मिक पथ का तीर्थयात्री बन सकता है?

इतनी विषम परिस्थिति में जिसे देखकर अक्ल चकरा जाती है और जिस से बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं, परमात्मा अपने जीवों पर दया करता है। वह स्वयं मानव के चोले में धरती पर उतर आता है और कष्ट झेलता है ताकि उसके बच्चे बख्शे जाएँ। लेकिन हमारे सामने फिर एक मुश्किल आती है। सत्गुरु की शिक्षाओं को समझना और प्रतिदिन सख़्ती से उनका पालन करना, सत्गुरु में विश्वास रखना, अपना तन, मन और सुरत पूरी तरह से उसे समर्पित करना, उसकी रज़ा में राज़ी रहना, ये सब इतना आसान नहीं। जब तक सत्गुरु और परमात्मा दोनों ही जीव पर कृपा न करें तब तक वह सत् को नहीं देख सकता और मुक्त नहीं हो सकता।

आपे जगजीवनु सुखदाता आपे बखसि मिलाए।। (32)

(वह स्वयं सारे संसार का मालिक है और दया करके जीव को अपने साथ जोड़ता है।)

हम अपनी सीमित बुद्धि के द्वारा सत्गुरु की बातों को पूरी तरह से

समझ भी नहीं सकते।

लेकिन परमात्मा अपनी दया और मौज से समय आने पर जीव को किसी संत-सत्गुरु से मिला देता है जो उस जीव का संबंध 'नाम' अर्थात् प्रभु के प्रकट स्वरूप-शब्द ध्वनि के साथ जोड़ कर जीव को धीरे-धीरे तब तक उस मार्ग पर चलाता है जब तक वह 'शब्द' या 'नाद' के मूल स्रोत तक नहीं पहुँच जाता।

विणु सचे दूजा सेवदे हुइ मरसनि बुटु।।
नानक कउ गुरि बखसिआ नामै संगि जुटु।। (315)

करमु होवै सतिगुरु मिलाए।।

सेवा सुरति सबदि चितु लाए।। (110)

कृपा करहि ता सतिगुरु मेलहि हरि नामु धिआई। (757)

(जो सत् की सेवा नहीं करते वे टूटे सरकंडे की तरह बिखर जाते हैं। ऐ नानक! जिन्हें सत्गुरु आर्शीवाद दे, वे नाम के साथ जुड़ जाते हैं। प्रभु की ख़ास दया हो, तभी कोई सत्गुरु से मिल पाता है और वह सुरत और 'शब्द' की एकता करा देता है। सत्गुरु से मिलना परमात्मा का पवित्र वरदान है और हरिनाम का जपना भी उसकी दया से ही होता है।)

सत्गुरु शरीर रखता हुआ भी प्रभु का रूप होता है। उस में भी वही गुण होते हैं जो परमात्मा में होते हैं। वह भी पापियों के उद्धार के लिये आता है और बाकी लोगों में भी अपनी दया का संचार करता है। वह जीवों के पाप धोता है और उन्हें नाम की दात देता है जो सभी बीमारियों—शारीरिक, आध्यात्मिक और आकस्मिक की सर्वश्रेष्ठ दवा है।

पतित उधारणु सतिगुरु मेरा मोहि तिसका भरवासा।।

बखसि लए सभि सचै साहिबि सुणि नानक की अरदासा।।
(620)

(मेरा सत्गुरु सभी पापों को हर लेता है और मैं उस पर ही निर्भर करता हूँ। ऐ सत्गुरु! मेरे सभी अपराधों को क्षमा कर दो। नानक केवल यही प्रार्थना करता है।)

गुर पूरे की वडी वडिआई हरि वडा सेवि अतुलु सुखु पाइआ।।
गुरि पूरै दानु दीआ हरि निहचलु नित बखसे चड़ै सवाइआ।।
(325)

(पूर्ण सत्गुरु के आर्शीवाद महान हैं। हरि की पूजा के साथ हमेशा रहने वाला आनंद प्राप्त होता है। परमात्मा के साथ मिलन पूरे सत्गुरु की दात है क्योंकि मुझे हमेशा के लिये माफ कर दिया गया है, इसलिये अब मैं असीमित और स्वतंत्र होकर आध्यात्मिक आसमानों में यात्रा करता हूँ।)

सत्रहवीं शताब्दी के अंग्रेज़ी कवि ड्राइडन ईसा के बारे में हमें बतलाते हैं :

परमात्मा को मानव तन में उतरता देखो। अपराधी को दुख भोगते देखो; तुम्हारे सारे दुष्कर्म परमात्मा ने अपने ऊपर ले लिये और अपने सारे श्रेष्ठ कर्म तुम्हारे ऊपर उँडेल दिये हैं।

सत्गुरु की कृपा उतनी ही असीम है जितनी उसकी महानता, यहाँ तक कि जो उसकी बुराई करते हैं उनको भी वह क्षमा कर देता है और उन्हें अपना लेता है :

कोई निंदकु हौवे सतिगुरु का फिरि सरणि गुर आवै।।
पिछले गुनह सतिगुरु बखसि लए सतसंगति नालि रलावै।।
(854)

(जो सत्गुरु की बुराई करता है वह यदि वापस घूम कर उस तरफ

मुँह करे तो सत्गुरु उसके पिछले गुनाह माफ करके उसे अपनी संगत में ले लेता है।)

ऐसे अनगिनत लोग हैं जिनके पाप माफ कर दिये जाते हैं और वे संसार-सागर से सुरक्षित पार कर लिए जाते हैं।

कउण कउण अपराधी बखसिअनु पिआरे साचै सबदि वीचारि।।
भउजलु पारि उतारिअनु भाई सतिगुर बेड़ै चाड़ि।। (638)

('शब्द'-धुनि से वह अनेक जीवों के कर्मों को जला कर भस्म कर देता है और भवसागर से अपने जहाज़ को सुरक्षित निकाल ले जाता है।)

सत्गुरु वास्तव में परमात्मा ही होता है। वह करुणा का सजीव समुद्र होता है। उसमें से हर प्रकार की बख़्शिश सदा ऐसे निकलती रहती है जैसे किसी सदाबहार झरने से ठंडा और ताज़ा पानी।

गुरु नाराइणु दयु गुरु गुरु सचा सिरजणहारु।।
गुरि तुठै सभ किछु पाइआ जन नानक सद बलिहार।। (218)

(गुरु के अंतर में बैठा नारायण करुणा का अवतार और सच्चा मित्र होता है। उसकी ख़ुशी में ही सब कुछ है और नानक उस पर बलिहार जाता है।)

परमात्मा और गुरु का सर्वोच्च दान केवल 'नाम' है। वह हमेशा अपने भक्तों पर नाम की बख़्शिश करता है और इस तरह से उन को मुक्ति प्रदान करता है।

हरि भगतां नो नित नावै दी वडिआई बखसीअनु नित चड़ै सवाई।।
(316)

अगम अगोचरु दरसु तेरा सो पाए जिसु मसतकि भागु।। (406)

आपि कृपालि कृपा प्रभि धारी सतिगुरि बखसिआ हरिनामु।।
(406)

(परमात्मा के भक्त हमेशा 'नाम' में मस्त रहते हैं, उसकी दया-मेहर से वे हमेशा आगे बढ़ते रहते हैं। उसकी एक झलक भी देखने को मिल जाये तो परमात्मा की बड़ी भारी कृपा समझो। जिस पर उसकी कृपा वास्तव में होती है उसे ही उसका दर्शन प्राप्त होता है। करुणामय प्रभु की कृपा से सत्गुरु 'नाम' की दात प्रदान करता है।)

इस संसार और अगले संसार में 'नाम' के उपहार से बढ़ कर कोई दूसरा उपहार नहीं :

नावै जेवडु होरु धनु नाही कोइ।। जिस नो बखसे साचा सोइ।।
(364)

('नाम' का ख़ज़ाना अतुलनीय है, सत्गुरु अगर चाहे तो उसे किसी को भी दे सकता है।)

व्यक्ति 'नाम' की दात पा सकता है और सत्संग और सत्गुरु के द्वारा परमात्मा के पास जाने का रास्ता पा सकता है।

जिसनो बखसे दे वडिआई।। गुर परसादि हरि वसै मनि आई।।
(159)

भए कृपालु गुपाल गोबिंद।। साधा संगि नानक बखसिंद।। (391)

(जिस पर सत्गुरु कृपा करे वह परमात्मा का प्यार पा सकता है। ऐ नानक! प्रभु की कृपा उभार में तभी आती है जब किसी साध-संत के द्वारा सच्चे रूप में ही उसे आर्शीवाद दिया गया हो।)

'नाम' के द्वारा ही परमात्मा की रक्षक कृपा प्राप्त होती है और उस के प्यार और रक्षक कृपा की लगातार कामना करने से दूसरी तरह से भी सहायता मिलती है। दोनों—कृपा और 'नाम' एक दूसरे के परस्पर

सहयोग से एक दूसरे को बढ़ाने में मदद करते हैं।

नाउ नानक बखसि नदरी करमु होइ।। (729)
राम नाम बिनु कवनु हमारा।।
सुख दुख सम करि नामु न छोडउ आपे बखसि मिलावणहार।।
(416)
इकु दमु साचा वीसरै सा वेला बिरथा जाइ।।
साहि साहि सदा समालीऐ आपे बखसे रजाइ।। (506)

(ऐ नानक! नाम केवल प्रभु-कृपा से ही मिलता है और राम नाम के अतिरिक्त कोई मित्र नहीं है। सांसारिक झंझटों से ऊपर उठ कर नाम से जुड़े रहो जिस से प्रभु कृपा तुम पर बरसेगी।)

(जिस क्षण मैं सत् को भूल जाता हूँ, मेरा वह क्षण नष्ट हो जाता है। हर साँस के साथ उसे याद करो और उसकी कृपा हमारे साथ होगी।)

उसके हुक्म को पहचानने और भाणे को स्वीकार कर लेने से उसकी कृपा हमारे ऊपर उतर आती है।

जिनी पछाता हुकमु तिन कदे न रोवणा।।
नाउ नानक बखसीस मन माहि परोवणा।। (523)

(जो उसके हुक्म को जानता है वह कभी दुखी नहीं होता। ऐ नानक! परमात्मा के नाम की दात अपनी आत्मा पर लिख लो।)

संत के द्वारा बीजा गया नाम का बीज फल दिये बिना नहीं रह सकता। दुनिया में ऐसी कोई भी ताकत नहीं जो उसे रोक सके और देर-सवेर, जीव अपने लक्ष्य—आत्मानुभव और प्रभु-अनुभव को अवश्य पा लेगा।

करमि मिलै सचु पाईऐ धुरि बखस न मैटे कोइ।।

भगति करहि मरजीवड़े गुरमुखि भगति सदा होइ।।
ओना कउ धुरि भगति खजाना बखसिआ मेटि न सकै कोइ।।
(62)

(प्रभु-कृपा द्वारा ही व्यक्ति सत् को पाता है जिसे विकसित होने से कोई नहीं रोक सकता। जीते-जी मरने के अभ्यास से 'नाम' के बीज को पानी दिया जाता है और गुरमुख ऐसा करते हैं। परमात्मा उन्हें यह खज़ाना प्रदान करता है जिसे कोई भी लूट नहीं सकता।)

काल और माया भी नाम के बीज को नष्ट नहीं कर सकते क्योंकि यह उस मंडल में बोया जाता है जो उनके साम्राज्य से बहुत ऊपर है।

इसके अतिरिक्त इस बीज को बीजने वाला यानी सत्गुरु स्वयं सत्पुरुष होता है और इसलिये ईश्वर (सूक्ष्म मंडल का मालिक-निरंजन) और परमेश्वर (कारण मंडल का मालिक-ओम) उसके काम में हस्तक्षेप नहीं कर सकते।

गुर की दाति न मेटै कोइ।। जिस बखसे तिसु तारे सोइ।। (1030)
गुर का सबदु न मेटै कोइ।। गुरु नानकु नानकु हरि सोइ।। (865)

(गुरु की दात अमर है और जिसे वह मिलती है, वह तर जाता है। सत्गुरु का शब्द कोई नहीं मिटा सकता। ऐ नानक! सत्गुरु स्वयं परमात्मा होता है, कोई और नहीं।)

परमात्मा की बख़्शिश असीम है और कभी खत्म नहीं होती लेकिन बड़े भाग्य हों, तभी यह मिलती है। जीव को आवागमन के अनंत चक्र से बचाने के लिए उसकी कृपा का एक कण ही काफी है:

आपे सचा बखसि लए फिरि होइ न फेरा राम।। (571)
आवण जाणा न थीऐ निज घरि वासा होइ।। (993)

(एक बार उसकी बख़्शिश हो जाये तो जन्मों-जन्मों के अनंत चक्र का अंत हो जाता है और जब आना-जाना ख़त्म हो जाता है तो

आत्मा निजघर में जाकर हमेशा के आराम को पा जाती है।)

यह दौलत गुरुमुख को मिलती है, मनमुख को नहीं:

नानक सभु किछु आपे आपि है दूजा नाही कोइ।।
भगति खजाना बखसिओनु गुरमुखा सुखु होइ।।
जे गुरु झिड़के त मीठा लागै जे बखसे त गुर वडिआई।।
गुरमुखि बोलहि सो थाइ पाए मनमुखि किछु थाइ न पाई।।

(994)

(ऐ नानक! परमात्मा सब कुछ स्वयं ही करता है और गुरमुख उसकी बख़्शिश का आनन्द पाता है। सत्गुरु के कड़ुवे शब्द भी मीठे लगते हैं। उसके मीठे शब्द प्रभु का वरदान हैं। उसके शब्द बहुतायत में फल देते हैं लेकिन मनमुख के शब्द निष्फल हो जाते हैं।)

उसकी ही बख़्शिश से ही व्यक्ति 'नाम' की कमाई करता है।

जिसु तूं बखसहि नामु जपाइ।। दूतु न लागि सकै गुन गाइ।।
(416)

(जिस पर आपकी बख़्शिश हो, वही 'नाम' जपता है।)

मानव स्वयं एक असहाय प्राणी है और कुछ कर नहीं सकता। इसलिये जो कुछ वह करता नज़र आता है, उसके लिये उसे घमण्ड नहीं करना चाहिये।

करन करावनहार सुआमी।। सगल घटा के अंतरजामी।। (266)

(परमात्मा स्वयं ही सारे काम करता है। वही सभी दिलों के भेदों को जानता है।)

सभी बीमारियों की एकमात्र दवा और प्रभु की बख़्शिश को पाने का एक मात्र तरीका यही है कि संत-सत्गुरु के चरण-कमलों में पूरी नम्रता के साथ संपूर्ण आत्म-समर्पण कर दो।

अध्याय 27

सत्गुरु की सँभाल

सत्गुरु और शिष्य का संबंध अद्वितीय है और धरती पर इसकी कोई बराबरी नहीं कर सकता। फिर भी संतों ने हमें इसके बारे में कुछ-कुछ समझाने का यत्न किया है। सभी सांसारिक संबंध थोड़े बहुत स्वार्थ से भरे होते हैं परंतु सत्गुरु और शिष्य का संबंध पूर्णतया निस्वार्थ प्रेम से भरा होता है।

तुलना के लिये हम एक माता और बच्चे के प्यार को विचारते हैं। जन्म के समय नवजात शिशु हाड़-माँस का एक असहाय पुलिन्दा होता है। वह अपनी आवश्यकताओं के बारे में कुछ कह नहीं सकता और न ही वह अपनी देखभाल कर सकता है लेकिन माँ मानवता के उस छोटे टुकड़े की संभाल करती है। वह उसकी हर जरूरत का ध्यान रख कर उसे पूरा करती है। उसकी खुशी में माता की खुशी होती है और उसके दुख में उसका दुख। रात-दिन वह बच्चे के सुख के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने को तैयार रहती है। वह बच्चे को अधिक से अधिक सहूलतें प्रदान करने के लिए अपनी सब जरूरतों का त्याग कर देती है और यहाँ तक कि उसके लिए अपना जीवन भी कुरबान करने के लिए तैयार रहती है। जैसे बच्चा बड़ा होता है उसमें माता के प्रति प्यार बढ़ता है। आँखों से आँखों में प्रेम की किरणें जाती हैं। चुप की भाषा में वह प्रेम का पहला पाठ सीखता है। फिर बच्चे को तोतली भाषा में बोलना सिखाया जाता है और इसमें अपनी सफलता पा कर माता की खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहता।

ठीक इसी प्रकार जब जीव सत्गुरु द्वारा प्रवान किया जाता है तो सत्गुरु के घर में यह उसका दूसरा जन्म होता है। वह मन और माया की

मलीनता में बुरी तरह रंगा होता है और दुनियावी मोह-बंधनों में पूर्णतया बंधा होता है। वह शरीर और शारीरिक संबंधों में इतना लिप्त होता है कि वह उनसे अलग सोच भी नहीं सकता।

अपने संपूर्ण सांसारिक ज्ञान, धन, प्रसिद्धि और नाम के बावजूद आध्यात्मिक मामलों में वह (जीव) कोरा ही होता है। उसका संपूर्ण जीवन इंद्रियों के घाट पर गुज़रा होता है और उसे इंद्रियों के भोगों-रसों के अलावा और कुछ पता नहीं होता और वे ही उसकी जिंदगी के सर्वस्व होते हैं।

सत्गुरु के घर में जाकर जब शिष्य द्विजन्मा बनता है तो सत्गुरु अपने ऊपर बहुत बड़ा दायित्व लेता है। अपने उपदेशों और अपनी तवज्जो द्वारा वह धीरे-धीरे जीव को इंद्रियों के घाट की लम्पटताई से मुक्ति दिला देता है। वह शिष्य को बतलाता है कि वह न तो शरीर है, न मन है, न बुद्धि है बल्कि इन सबसे ऊँचा है; वह आत्मा है और प्रकृति ने उसे विभिन्न प्रकार के संसाधन (शरीर, मन और इंद्रियाँ) जीवन में किसी महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए दिए हैं। आध्यात्मिक साधनों द्वारा सत्गुरु उसे इस योग्य बना देता है कि वह अपने मन को स्थिर कर सके। इसके बाद वह स्थिरता की अवस्था पा लेता है और फिर जीवन को एक नए दृष्टिकोण से देखना शुरू कर देता है। उसका सारा नज़रिया बदल जाता है और उसकी आत्मिक चेतनताएं जाग उठती हैं।

वह फिर इंद्रियों का गुलाम नहीं रहता अपितु एक अंतरीय संतुष्टि, शांति और ख़ामोशी पा जाता है जो उसे हर समय आत्मा के ठिकाने पर टिकाये रखती है। यही सत्गुरु का काम होता है बल्कि इससे भी बहुत अधिक होता है। जीव को सांसारिक मैल से पाक-साफ करना कोई मामूली काम नहीं है लेकिन आध्यात्मिक जीवन के लिये यह नितांत आवश्यक है।

वह शिष्य की आत्मा को इंद्रियों, मन और बुद्धि के चंगुल से मुक्त करके इन सब से ऊपर लाता है और यह काम सत्गुरु के बिना कोई दूसरा नहीं कर सकता।

सुरत की धाराओं के शक्तिशाली प्रवाह को, जो नीचे की ओर बाहरी दुनिया में फैल रहा है, रोकना और रोक कर एक केंद्र अर्थात् आत्मा के ठिकाने पर एकत्र करना अपने आप में बड़ा भारी काम होता है। सत्गुरु का अगला काम इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है।

प्रारंभिक सफाई – अभियान के बाद वह अंतरीय आँख पर लगे पर्दे को हटाता है और उसे दृष्टि और ज्योति प्रदान करता है और वह अंतरीय कान पर लगी मोहर को तोड़ता है जिससे वह जीव को अंतर का आध्यात्मिक संगीत सुनने के योग्य बना देता है। अपनी तवज्जो का उभार देकर वह मोह – माया में फँसे जीव को ऐसा निपुण बना देता है जो परमात्मा के अनलिखे कानून और अनबोली भाषा को समझ सके, उसका आनंद उठा सके और बाहरी स्थूल इंद्रियों के बिना काम कर सके।

सत्गुरु अपना जीयादान देकर शिष्य की संभाल करता है।

धनु धनु गुरु गुरु सतिगुरु पाधा जिन हरि उपदेसु दे कीए सिआणे।।

(168)

सतिगुरु सिख के बंधन काटै।। (286)

(वह सत्गुरु धन्य है जो अपने आदेशों के द्वारा हमें पूर्णतया साफ – पवित्र कर देता है। सत्गुरु शिष्य के सभी बंधनों को काट कर फेंक देता है।)

जैसे अंग्रेज़ी के महान कवि वर्डस्वर्थ ने अपनी बहन के बारे में

कविता में गाया है, वैसे ही एक शिष्य भी अपने सत्गुरु के बारे में गाता है :

उसने मुझे आँखें दीं, उसने मुझे कान दिये, नम्रता भरी
देखभाल और नरम से भय भी दिये, ऐसा दिल जो मीठे
आँसुओं का स्रोत है, प्यार, विचार और खुशियों से भरा है।

चाहे कितनी भी खतरनाक परिस्थितियाँ क्यों न हों, सत्गुरु अपने शिष्यों को हमेशा उनसे बचाता है। सत्गुरु की रक्षक भुजाएँ ढाल बन जाती हैं और शिष्य ऐसी ज़िंदगी बिताता है मानो आनंद ही आनंद हो। सत्गुरु ऐसा केवल इस लिये करता है क्योंकि उसने उस जीव की ज़िम्मेदारी ले रखी होती है। इस बारे में वह शिष्य पर कोई अहसान नहीं जताता और न ही यह ज़रूरी है कि उसे इस सँभाल का पता लगे।

सत्गुरु अपने शिष्य के पापों और खामियां का बोझा अपने ऊपर ले लेता है।

तुम्हारे सारे दुष्कर्म उसने अपने ऊपर ले लिये और अपनी सारी श्रेष्ठताएं तुम्हारे ऊपर उँड़ेल दी।

– ड्राइडन (17वीं शताब्दी के प्रसिद्ध अंग्रेज़ी कवि)

वह अपने जीव के कर्मों का लेखा – जोखा अपने हाथ में ले लेता है। उसकी सुरत की धाराओं के प्रवाह को उलट कर ऊपर की तरफ मोड़ कर और उसे इंद्रियों के जाल से आज़ाद कर सत्गुरु भविष्य के लिये उसे कोई और कर्म – बीज बीजने के योग्य नहीं छोड़ता। फिर भी इंसान होने के कारण जो कोई गलती वह करता है तो सत्गुरु नम्रतापूर्वक दृढ़ता से पेश आता है ताकि आगे भुगतने के लिये कोई कर्म बाकी न रहे। इस तरह से क्रियामान कर्मों (वर्तमान कर्म) का हिसाब चुकता कर दिया जाता है।

आगे प्रारब्ध कर्म आते हैं जो हमारे भविष्य या भाग्य का निर्धारण करते हैं और जिनके कारण हमें मौजूदा जन्म मिला होता है। सत्गुरु उन्हें नहीं छूता और शिष्य प्रसन्नता से उनके झंझटों में से गुज़रता हुआ अपना जीवन गुज़ार देता है।

भए कृपाल गुसाईआ नठे सोग संताप।।
तती वाउ न लगई सतिगुरि रखे आपि।। (218)

(परमात्मा की करुणा से सभी रोग-संताप दूर हो जाते हैं। सत्गुरु स्वयं जीव को सभी मुश्किलों से बचाता है।)

आख़िर बात जो कम महत्व की नहीं, यह है कि सत्गुरु जीव को तब तक जीवन की रोटी और जीवन का पानी ('नाम') देता रहता है जब तक वह आध्यात्मिक रूप से माहिर न हो जाये और किसी सीमा तक आत्म-निर्भर न हो जाए। 'नाम' की चिंगारी के स्पर्श मात्र से युगों-युगों के संचित कर्म भस्म हो जाते हैं और वे भविष्य में फल देने के योग्य नहीं रहते।

सतिगुरु सिख की करे प्रतिपाल।। सेवक कउ गुरु सदा दइआल।।
(286)

(सत्गुरु अपने शिष्य की प्रतिपालना करता है, अपने शिष्य पर वह सदा दयालु होता है।)

मैं जीवन की रोटी हूँ, जो मेरे पास आयेगा, कभी भूखा नहीं रहेगा, और जो मुझ पर विश्वास करेगा, कभी प्यासा नहीं मरेगा।
-जान 6:35 (बाइबल)

अपने बच्चे के लिये माता की संभाल से कहीं अधिक सत्गुरु द्वारा (शिष्य की) रक्षक संभाल होती है। वह हमेशा अपनी प्यार भरी दृष्टि अपने शिष्य पर रखता है और सभी हानिकारक चीजों से उसकी रक्षा

करता है क्योंकि उसके प्यार की कोई सीमा नहीं होती।

जिउ जननी सुतु जणि पालती राखै नदरि मझारि।।
अंतरि बाहरि मुखि दे गिरासु खिनु खिनु पोचारि।।
तिउं सतिगुरु गुरसिख राखता हरि प्रीति पिआरि।। (168)

(जैसे माता बच्चे को पैदा करके उसका पालन करती है और हमेशा उसकी देखभाल करती है, उसके चहुँमुखी विकास के लिये उसे भोजन देती है, इसी तरह सत्गुरु दिव्य-प्रेम से अपने प्रिय शिष्य की दिव्य देखभाल करता है।)

माता प्रीति करे पुतु खाइ।। मीने प्रीति भई जलि नाइ।।
सतिगुर प्रीति गुरसिख मुखि पाइ।। (164)

(जैसे माता अपने बच्चे को और मछली पानी को प्यार करती है, वैसे ही सत्गुरु अपने शिष्यों से प्यार करता है।)

इस विषय में नज़दीकी-दूरी का कोई प्रश्न नहीं होता क्योंकि सत्गुरु के सामने इसकी कोई अहमियत नहीं। उसकी लंबी और बलवान भुजाएं सब जगह पहुँच सकती हैं और उसकी सूक्ष्म नज़र हर जगह देख सकती है।

दस्ते पीर अज़ गायबां कोताह नेस्त।
दस्ते ऊ जुज़ कुदरते अल्लाह नेस्त। -मौलाना रूम

(उसका हाथ परमात्मा का हाथ होता है और परमात्मा की ताकत उसके द्वारा काम करती है।)

शिष्य कहीं भी क्यों न हो, उसकी बाहरी परिस्थितियाँ कितनी भी विषम क्यों न हों, सत्गुरु हमेशा उसके अंग-संग होकर हर कदम पर उसका मार्गदर्शन करता है क्योंकि यह उसका अमर वायदा है।

चीलें आकाश में उड़ती हैं लेकिन अपने अंडे अपनी तवज्जो देकर सेती (पकाती) हैं। इसी तरह से सत्गुरु भी अपने शिष्यों को अपनी नज़र के अंदर रखता है, उन्हें जीवन के पानी ('नाम' का बीज जो शिष्य की आत्मा में बीज दिया गया होता है) से तब तक सींचता रहता है जब तक आत्मा तीनों पर्दों (स्थूल, सूक्ष्म और कारण) से मुक्त होकर स्वयं प्रकाशित न हो उठे।

नानक सतिगुरु सिख कउ जीअ नालि समारै।। (286)
हाथ देइ राखै अपने कउ सासि सासि प्रतिपाले।। (682)

(ऐ नानक! सत्गुरु अपने जीवनदान द्वारा शिष्य की संभाल करता है, वह हर समय उस की रक्षा करता है।)

मात्र प्रेम ही सत्गुरु और शिष्य को सीमेंट की भांति बांधकर एक कर देता है। असीमित दया-मेहर द्वारा वह परमात्मा का संदेश दुखी मानवता के सामने रखता है और प्रार्थना करता है कि वे लोग उस अग्नि से बच जाएं जिस में सभी प्राणी जल रहे हैं।

मौलाना रूम फरमाते हैं :

ख़लक़ रा ख़्वानद सूए दरगाहे ख़ास।
ख़लक़ रा ख़्वानद अफ़ू कुन देह ख़ुलास।

(वह लोगों को परमात्मा के साम्राज्य की तरफ बुलाता है। वह प्रभु से प्रार्थना करता है कि उन्हें क्षमा करे और मुक्ति दे।)

शिष्य का असली मित्र सत्गुरु ही होता है। वह उसे तनाव और निराशापूर्ण अवस्थाओं से बचाता है। जब शिष्य के विरोध में शक्तिशाली ताकतें इकट्ठी हो जाती हैं, वह उनमें घिर जाता है और सहायता की सभी आशायें समाप्त हो जाती हैं तब भी सत्गुरु उसकी सहायता को आता है। समय-समय पर शिष्य को सत्गुरु के परम शक्तिशाली प्रभाव

का अनुभव होता रहता है जो उसके भले के लिये काम करता रहता है। कभी-कभी वह ऐसे ढंग से काम करता है जो शिष्य के लिये समझने बड़े कठिन होते हैं। जैसे माता सुबह-सवेरे अपने सोये हुए बच्चे के जागने की प्रतीक्षा करती है, इसी तरह और उस से भी अधिक बेचैनी के साथ सत्गुरु बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा करता है कि कब उसका शिष्य मन और माया के अज्ञान से निकल कर अपना सिर ऊपर उठायेगा और सहायता के लिये उसकी तरफ देखेगा तथा उसका दिल प्रसन्न होगा।

सत्गुरु की संभाल शिष्य की जिस्मानी मौत के समय और अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट होती है। जब उसके सभी रिश्तेदार और मित्र असहाय होकर उसके बिस्तर के पास इंतज़ार कर रहे होते हैं और डॉक्टर नाउम्मीदी जाहिर कर देते हैं, तब सत्गुरु का दिव्य स्वरूप उसकी संभाल के लिए प्रकट हो जाता है और इस दुनिया से विदा होती आत्मा को अगली दुनिया में ले चलता है जहाँ उसके कर्मों का हिसाब होता है।

उसके बाद वह उसे उस मंडल में ले जाता है जहाँ उसकी आध्यात्मिक साधना के द्वारा आगे तरक्की हो सके।

सचा सतिगुरु सेवि सचु सम्हालिआ।।
अंति खलोआ आइ जि सतिगुर अगै घालिआ।। (1284)

सजण सेई नालि मै चलदिआ नालि चलन्हि ।।
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै खड़े दिसन्हि।। (729)

मेरा गुरु परमेसरु सुखदाई।।
पारब्रहम का नामु दृड़ाए अंते होइ सखाई।। (915)

(सच्चे सत्गुरु की सेवा करो और सत् की दौलत बटोर लो। आखिरी

समय में वह तुम्हारी सहायता के लिये आयेगा। जो मेरी अंतिम यात्रा में साथ दे, वही केवल मित्र है और वह धर्मराज की कचहरी में मेरे साथ खड़ा होगा। मेरा सत्गुरु सब कुछ है और सभी सुखों का स्रोत है। वह मुझे पारब्रह्म से जोड़ता है और अंत में मेरी सहायता को आता है।)

मौलाना रूम फरमाते हैं :

दामने ऊ गीर ज़ूद ऐ बे गुमाँ
ता रही अज़ आफ़ ते आख़िर ज़मां।

(ऐ नादान! जल्दी से किसी ऐसे मार्गदर्शक को ढूँढ क्योंकि तभी तू परलोक के खतरों से बच सकेगा।)

हमारे सारे सांसारिक संबंध क्षणभंगुर और अस्थायी हैं। कुछ लोग तो हमें गरीबी में छोड़ जाते हैं, कुछ कष्ट के दिनों में और बाकी बीमारी के समय में। बहुत थोड़े लोग ऐसे होते हैं जो ज़िंदगी-भर हमेशा साथ निभाते हैं लेकिन मौत के समय वे भी पीछे छूट जाते हैं परंतु सत्गुरु सच्चा मित्र होता है जो हमेशा हर जगह शिष्य के अंग-संग सहाई होकर अपनी रक्षक भुजाओं का कवच बना कर उसकी रक्षा करता है। वह मौत के समय आत्मा के साथ आ खड़ा होता है और दूसरी दुनिया के मंडलों में भी मार्गदर्शक बन कर उसके साथ जाता है।

नानक कचड़िआ सिउ तोड़ि ढूढि सजण संत पकिआ।
ओइ जीवंदे विछुड़हि ओइ मुइआ न जाही छोड़ि।। (1102)

(ऐ नानक! सभी सांसारिक बंधनों को तोड़ डालो और कोई पक्का संत सत्गुरु खोजो। ये सांसारिक संबंधी तो तुम्हें जीते-जीअ छोड़ जायेंगे लेकिन सत्गुरु तुम्हें मर कर भी नहीं छोड़ेगा और हमेशा अंग-संग सहाई रहेगा।)

जब शिष्य की आत्मा स्थूल शरीर को त्यागती है तो सत्गुरु का ज्योतिर्मय स्वरूप उसे लेने आ जाता है और इस तरह सत्गुरु उसे अपने

साथ ले चलता है।

कबीर साहब हमें बतलाते हैं कि जैसे सोने को कभी जंग नहीं लगता और न लोहे को घुण खा सकता है इसी तरह सत्गुरु का शिष्य, चाहे अच्छा हो या बुरा, कभी नर्क नहीं जाता :

सोना काई न लगे, लोहा घुण नहिं खाय।
बुरा भला जो गुरु भगत, कबहुं नरक न जाय।।

सत्गुरु वास्तव में इस लोक और परलोक, दोनों में सत्गुरु होता है और दोनों लोकों में जीव की सहायता करता है। उससे बढ़ कर कोई दूसरा मित्र नहीं हो सकता।

मै हरि हरि खरंचु लइआ बंनि पलै।।
मेरा प्राण सखाई सदा नालि चलै।। (94)

ऐथे ओथै रखवाला।। प्रभ सतिगुर दीन दइआला।। (628)

सो सतिगुरु पिआरा मेरै नालि है जिथै किथै मैनो लए छडाई।।
तिसु गुर कउ साबासि है जिनि हरि सोझी पाई।। (588)

(मैंने अपने हरि को पकड़ रखा है, वह मेरा पालनकर्ता है और हमेशा मेरे अंग-संग सहाई है। दोनों लोकों–इस लोक और परलोक में, वह रखवाला है क्योंकि सत्गुरु सर्वशक्तिमान और करुणा-सागर है। सत्गुरु मेरे अंग-संग सहाई है और मेरी आवश्यकताओं और मुसीबतों में हमेशा सहायता करता है। ऐसा सत्गुरु धन्य है जो प्रभु को प्रकट कर के दिखलाता है।)

सतिगुरु बाझु न बेली कोई।। ऐथै ओथै राखा प्रभु सोई।। (1031)

(सत्गुरु से बढ़ कर दूसरा कोई मित्र नहीं हो सकता क्योंकि वह इस लोक और परलोक में, सब जगह मेरा रक्षक है।)

जब कभी कोई जीव किसी सत्गुरु से मिलता है तो उसे प्रभु का धन्यवाद करना चाहिये क्योंकि सत्गुरु उसे दीक्षा देकर अमर जीवन

प्रदान कर देता है। क्योंकि सत्गुरु करुणा का सागर होता है इस लिए वह मुश्किलों के समय में बिना कोई एहसान जताए शिष्य की सहायता करता है।

मौलाना रूम उसके बारे में कहते हैं :

मेहरबां बे-रिश्वतां यारी कुनां, दर मकामे सख्त ओ दय रुदे गराँ।।

(वह मित्र निस्वार्थ और कृपालु हृदय है। वह भंयकर मुसीबतों और मुश्किलों में सहायता करता है।)

गुरु ने निस्सहायों की सहायता करने की कसम खा रखी होती है। मात्र कृपालुता के कारण वह सारी मानवता पर दया-मेहर की वर्षा करता है। उसका संग सबसे अधिक लाभदायक है। अगर गुरु अंग संग हो तो लाखों बाजू भी कुछ नहीं बिगाड़ सकते :

जा गुरु होइ वलि लख बाहे किआ किजइ।। (1399)

सत्गुरु के आकर्षक दरबार में जिनकी पहुँच है, वे जीव वास्तव में धन्य हैं क्योंकि उन्हें इस लोक और परलोक में चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं।

तिसु कउ जगतु निविआ प्रभु पैरी पइआ जसु वरतिआ लोई।।

तिसु कउ खंड ब्रह्मंड नमस्कारु करहि जिस कै मस्तकि धरिआ गुरि पूरै सो पूरा होई।। (309)

(उस के सामने सारा संसार श्रद्धापूर्वक झुकता है और सारे रूहानी मंडल उसके दर्शन के लिए उत्सुक रहते हैं। पूर्ण या मुकम्मल वह है जो पूर्ण या मुकम्मल से जुड़ा हुआ है।)

वे शिष्य कितने अधिक भाग्यशाली हैं जो उसकी पवित्र छत्रछाया में रहते हैं; अपने जीवनकाल में भी तथा उसके बाद भी वे तीव्र गति से अध्यात्म के राजमार्ग पर दिन-दुगनी रात-चौगुनी उन्नति करते चले जाते हैं।

अध्याय 28

गुरु और कंट्रोलिंग पावर

सत्गुरु दया-मेहर का झरना है। उसकी दया-मेहर के तरीके अद्भुत हैं। दया-मेहर की केवल एक ही दृष्टि से वह जीव को सदा के लिए निहाल कर सकता है। वह 'नाम' की भरपूर वर्षा करता है। जब कभी वह अपनी मौज में किसी जीव के ऊपर अपना दया मेहर भरा हाथ रख दे तो उस जीव को उसके बाद किसी दूसरी बख्शिश की ज़रूरत नहीं रहती।

पलक झपकते ही जीव अज्ञान-रूपी अंधकार के मोटे पर्दे को पार कर जाता है और उसकी बख्शिश की शक्ति का अनुभव पा जाता है जो उसके अंतर में दिव्य ज्योति और श्रुति के रूप में प्रकट हो जाती है। इस अनुभव से जीव अनेक युगों के अमिट कर्म बंधन से एकदम मुक्त हो जाता है और दया-मेहर और शांति से भरपूर अमर जीवन पा जाता है।

मै सुखी हूँ सुखु पाइआ।। गुरि अंतरि सबदु वसाइआ।।
सतिगुरि पुरखि विखालिआ मसतकि धरि कै हथु जीउ।। (73)

मेरै हीअरै रतनु नामु हरि बसिआ गुरि हाथु धरिओ मेरै माथा।।
जनम जनम के किलबिख दुख उतरे गुरि नामु दीओ रिनु लाथा।।

(696)

(मेरे सत्गुरु ने मुझे शांति का वर दिया है क्योंकि उसने अंतर में शब्द प्रकट कर दिया है। मेरे सत्गरु ने अपने हाथ के स्पर्श द्वारा प्रभु के दर्शन करा दिए हैं। गुरु के हाथों के स्पर्श द्वारा परमात्मा ने मुझे नाम का रत्न दिया है। उसके 'नाम' की शक्ति से युगों-युगों के पाप नष्ट हो गये हैं।)

तिसु सालाही जिसु हरि धनु रासि।।
सो वडभागी जिसु गुर मसतकि हाथु।। (1155)
जिसु मसतकि गुरि धरिआ हाथु।।
कोटि मधे को बिरला दासु।। (1340)

(जिसके पास प्रभु रूपी खज़ाना है, उस की उपासना करो। वह जीव धन्य है जिस के सिर के ऊपर किसी संत-सत्गुरु का हाथ है। जिस के मस्तक पर सत्गुरु हाथ रख देता है, वह धन्य है और ऐसा अवसर किसी विरले जीव को ही प्राप्त होता है।)

इस विस्तृत दुनिया में सत्गुरु के हाथों का स्पर्श जीव को कष्टों और मुसीबतों से बचाता है और वह जीव निश्चिंत हो जाता है। सारी दुनिया ही उसके चरणों में प्रणाम करती व झुकती है। वह किसी भी मंडल में बे-रोकटोक जा सकता है क्योंकि पूरे सत्गुरु की कृपा उसे भी पूर्ण बना देती है।

चतुर दिसा कीनो बलु अपना सिर ऊपरि करु धारिओ।।
कृपा कटाख्य अवलोकन कीनो दास का दूखु बिदारिओ।। (681)

(सत्गुरु का मजबूत हाथ ऊपर होने से चारों दिशाओं में शिष्य की रक्षा होती है। सत्गुरु की कृपा शिष्य की सभी बुराइयों को समाप्त कर देती है और आध्यात्मिक मंडलों का रास्ता खोल देती है।)

अध्याय 29

गुरु के सामने आत्म-समर्पण

सत्गुरु के चरण-कमलों में आत्म-समर्पण का अर्थ है अपनी इच्छा को सत्गुरु की इच्छा में मिला देना और अपने आप को पूरी तरह से उसके हवाले कर देना। सभी चिंताओं-परेशानियों से बचने का यह सबसे सरल और अचूक ढंग है। ऐसा तभी होता है जब शिष्य को अपने सत्गुरु के सर्वशक्तिमान होने का पूरा विश्वास हो।

यह आत्म-समर्पण उस लाचार मरीज़ के समर्पण जैसा होता है जो किसी सर्जन की समर्था में विश्वास करके अपना जीवन उसके हाथों में सौंप देता है और जो भी इलाज वह करे, उसके लिए तैयार हो जाता है।

या फिर इस समर्पण अवस्था की तुलना उससे की जा सकती है कि जब जंगल में राह भटक गया निराश राही उस मार्गदर्शक के हवाले हो जाए जो जंगल के रास्तों से भली-भाँति परिचित हो।

सत्गुरु का काम पराविद्या (परलोक की विद्या) का मात्र किताबी ज्ञान ही देना नहीं है अपितु वह हमें रूहानियत का प्रैक्टीकल अनुभव भी प्रदान करता है और सभी कठिनाइयों में शिष्य की सहायता भी करता है। सच्चा मित्र केवल यही नहीं बताता कि किस तरह से मन और माया के प्रभाव से बच निकलना है बल्कि वह उनमें से बाहर निकलने में स्वयं हमारी मदद भी करता है।

उदाहरण के लिये, कल्पना करो कि किसी व्यक्ति को विदेश जाना है। वह वहाँ जाने के विभिन्न साधनों के बारे में पूछताछ करेगा-ज़मीनी, समुद्री और हवाई मार्ग, जिस किसी से भी वह जाने का मन बनाए। यह चुनाव करने के बाद वह हवाई जहाज, समुद्री जहाज या रेलगाड़ी में प्रवेश करता है और चालक की कुशलता पर

विश्वास करके, जरा भी चिंता किये बिना अपनी सीट पर आराम से बैठ जाता है। अगर समुद्री जहाज भँवर में या हवाई-जहाज किसी तूफान में फँस जाता है तो यह कैप्टन या पायलट का फर्ज़ बनता है कि हर संभव कोशिश करके यात्रियों के प्रति अपने दायित्व को निभाता हुआ उनके जान और माल की रक्षा करे और उन्हें सुरक्षित स्थान पर पहुँचाये।

ठीक इसी तरह से आध्यात्मिक जिज्ञासु को भी ध्यानपूर्वक खोजबीन के बाद पहले सत्गुरु की आध्यात्मिक योग्यता के बारे में पता लगाना होता है लेकिन एक बार गुरु चुन लेने के बाद उसे पूरी तरह उसके हवाले हो जाना चाहिए क्योंकि केवल गुरु ही आध्यात्मिक राह से पूरी तरह वाकिफ होता है, उसके ऊंच-नीच को जानता है और एक अचूक मार्गदर्शक का काम करता है।

समर्पण का अभिप्राय है शिष्य को सत्गुरु की योग्यता पर पूरा विश्वास हो और वह सत्गुरु के सभी आदेशों पर पूरी तरह से चले, अपनी अकल को उसमें दखल न देने दे क्योंकि उसकी अपनी अकल सीमित है और गुरु के आदेशों के भेद या राज़ को नहीं समझ सकती।

सत्गुरु के आदेशों पर प्रश्न चिन्ह लगाना उसका काम नहीं। सिपाही की तरह क्यों और किस लिये को जाने बिना उसे सत्गुरु का आदेश मानना सीखना चाहिये क्योंकि सत्गुरु ही जानता है कि शिष्य के लिए क्या बेहतर है।

इसलिए शिष्य को सत्गुरु की आज्ञा का अक्षरश: (पूरा) पालन करना चाहिये और स्वयं को उस आध्यात्मिक अभ्यास में लगा देना चाहिये जैसा कि उसे बताया गया हो।

आध्यात्मिक सफलता का यही रास्ता है, इसके अतिरिक्त कोई और नहीं।

इस संदर्भ में हमारे पास ईरान के महान सूफी शायर हाफिज़ साहब का निम्न कथन है :

बमै सज्जादह रंगीं कुन गरत पीरे मुग़ां गोयद।
कि सालिक बेख़बर न बवद ज़ राहो-रस्मे मंज़िल हा।

(अगर मुर्शिदे-कामिल चाहे कि अपनी नमाज़ का मुसल्ला (नीचे बिछाने का कपड़ा) शराब में रंग दो, तो रंग दो क्योंकि वह आध्यात्मिक मार्ग के मोड़-तोड़, रुकावटों और मुश्किलों से नावाकिफ नहीं है।)

शिष्य जब अपना सब कुछ सत्गुरु को अर्पण कर देता है तो वह चिंतामुक्त हो जाता है और सत्गुरु को उसकी सारी ज़िम्मेवारी अपने ऊपर लेनी होती है जैसे कि माता अपने छोटे बच्चे के लिये करती है जिसको अभी अपनी भलाई की समझ नहीं होती।

जैसे-जैसे शिष्य अपनी साधना में आगे बढ़ता जाता है तो वह सत्गुरु से और अधिक दया-मेहर प्राप्त करने के लायक बनने लगता है और सत्गुरु की असीम दया मेहर और मार्गदर्शन से, वह दिन-ब-दिन उन्नति करता जाता है और उसकी सारी इच्छाएँ अपने आप पूरी होने लगती हैं।

संतहु सुनहु जन भाई गुरि काढी बाह कुकीजै।।

जे आतम कउ सुखु सुखु नित लोड़हु तां सतिगुर सरनि पवीजै।।
(1326)

(संत-महात्मा जोर दे कर कहते हैं, ''ऐ शांति के खोजने वालो! किसी संत-सत्गुरु की शरण ग्रहण करो।'')

भगवत् गीता के अठारहवें अध्याय के 66वें श्लोक में भगवान

कृष्ण उद्घोष करते हैं :

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

(सभी कर्मों – धर्मों को छोड़ कर मेरी शरण में आ जा। सभी पापों से मैं तुम्हें बचाँऊगा, किसी प्रकार की चिंता मत कर।)

पवित्र कुरान में हमें इसी तरह का उल्लेख मिलता है :

नेक काम करते हुए जो कोई भी अल्लाह को समर्पित रहेगा, उसका इनाम अल्लाह के पास है और उसे कोई डर नहीं होगा और न ही उसे कोई तकलीफ होगी। – 2.112.10.6

और बाइबल में कहा गया है :

मैं तुम्हारे ऊपर अपना हाथ रख दूँगा और खोट को निकाल बाहर करूँगा। – ईसाइया 1:25 (बाइबल)

बोझे से दबे सभी मेहनतकश लोगो! मेरे पास आओ, मैं तुम्हें विश्राम प्रदान करूँगा। – मत्ती 11:28 (बाइबल)

और,

कष्ट के दिनों में मुझे याद करना, मैं तुम्हें कष्ट से छुड़ा दूँगा।

आत्म – समर्पण (शरणागत का रास्ता) कोई आसान काम नहीं। ऐसा करने के लिये व्यक्ति को नादान बच्चे की भाँति बनना होगा। इसका मतलब होगा पूरा अंतरीय परिवर्तन करना और अपनी मति को छोड़कर गुरु की मति को अपना बना लेना, अपना व्यक्तित्व ख़त्म कर के गुरु का रूप बन जाना। यह रास्ता अपना आपा मिटा देने का है जिस पर हर कोई नहीं चल सकता।

दूसरी तरफ आध्यात्मिक साधना (करनी) का रास्ता तुलनात्मक रूप से आसान है। आध्यात्मिक उन्नति के लिये निजी प्रयत्न तो कोई भी करके देख सकता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह आत्म – समर्पण के रास्ते की तुलना में अधिक लंबा और कष्टों से भरा रास्ता है लेकिन सत्गुरु में विश्वास होने से इस पर हर कोई कदम – कदम करके पक्के तौर पर आगे बढ़ सकता है। अगर कोई इंसान ऊँचे भाग्य से आत्म – समर्पण या शरणागत का रास्ता अपना लेता है तो उसे सत्गुरु की सभी दातें जल्दी ही मिल सकती हैं क्योंकि वह सीधा उसकी गोद में जा पहुँचता है और उसे स्वयं अपने लिये कुछ नहीं करना होता।

उसके बाद वह सत्गुरु का चुना हुआ प्रतिनिधि, उसका प्रिय पुत्र, खुद परमात्मा का ही पुत्र होता है। परन्तु वास्तव में कोई विरली कृपा – पात्र आत्मा ही इस तरह की अवस्था प्राप्त करने में सफल होती है।

जा कै मसतकि करम प्रभि पाए।। साध सरणि नानक ते आए।।
(296)

जो सतगुर की सरणागति हउ तिन कै बलि जाउ।।
दरि सचै सची वडिआई सहजे सचि समाउ।।
नानक नदरी पाईऐ गुरमुखि मेलि मिलाउ।। (31)

(ऐ नानक! अगर परमात्मा चाहे तब ही कोई व्यक्ति आत्म – समर्पण का रास्ता अपना पाता है। वह जीव वास्तव में धन्य है जो सत्गुरु की शरण लेता है। सत् के दर पहुँच कर वह सत् का आनन्द पाता है और सत् में मिल जाता है। ऐ नानक! परमात्मा की कृपा हो तभी किसी गुरमुख से मुलाकात होती है।)

धर्मग्रंथों में इस मार्ग को अपनाने के बहुत से लाभों का वर्णन है:

गुरु पूरा पाइओ मेरे भाई।।
रोग सोग सभ दूख बिनासे सतिगुर की सरणाई।। (395)

हरख सोग का नगरु इहु कीआ।। से उबरे जो सतिगुर सरणीआ।।
त्रिहा गुणा ते रहै निरारा सो गुरमखि सोभा पाइदा।। (1075)

मन मेरे गुर सरणि आवै ता निरमलु होइ।।
मनमुख हरि हरि करि थके मैलु न सकी धोइ।। (39)
जगत उधारण सेई आए जो जन दरस पिआसा।। (207)

सरब सुखा का दाता सतिगुरु ताकी सरनी पाईऐ।।
दरसनु भेटत होत अनंदा दूखु गइआ हरि गाईऐ।। (630)

मन महि मुंद्रा हरि गुर सरणा।। (879)
जगतु जलंदा डिठु मैं हउमै दूजै भाइ।।
नानक गुर सरणाई उबरे सचु मनि सबदि धिआइ।। (651)

(सत्गुरु की शरण से सभी बीमारियाँ और दुख समाप्त हो जाते हैं। मात्र सत्गुरु की शरण लेने से ही व्यक्ति सुख-दुख की दुनिया से बच निकलता है। गुरमुख तीनों गुणों से ऊपर होता है और परमात्मा को स्वीकार होता है। गुरु की शरण से मन पवित्र हो जाता है लेकिन परमात्मा का नाम केवल ऊँचा-ऊँचा बोल कर गाने से कोई खास फायदा नहीं होता। जो उस की एक झलक पाने के प्यासे हैं, वे संसार का उद्धार करते हैं। जो उनकी शरण में आते हैं, उनकी इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं। सत्गुरु सभी सुखों का दाता है, उसकी शरण लो। उसका दर्शन आनन्द देने वाला है, उसके गुणानुवाद गाओ। मैं अंहकार की आग में सारे संसार को जलता देखता हूँ। हे नानक! तुम सत्गुरु की शरण ले लो और सच्चे 'शब्द' से ध्यान जोड़ कर बच जाओ।)

करन करावन सरनि परिआ।।
गुर परसादि सहज घरु पाइआ मिटिआ अंधेरा चंदु चड़िया।।
(393)

जीअ दानु गुरि पूरै दीआ राम नामि चितु लाए।।
आपि कृपालु कृपा करि देवै नानक गुर सरणाए।। (443)

गुपता नामु वरतै विचि कलजुगि घटि घटि हरि भरपुरि रहिआ।।
नामु रतनु तिना हिरदै प्रगटिआ जो गुर सरणाई भजि पइआ।।
(1334)

(मैं करण कारण सत्ता की शरण में पड़ गया हूँ। उसकी कृपा से मैंने निज घर पाया, अंधेरा हटा और चाँद चढ़ गया।

पूरे सत्गुरु से जीवनदान पा कर अब मेरे अंदर राम नाम धुनकारें मार रहा है। ऐ नानक! सत्गुरु की शरण में जाने से प्रभु स्वयं ही कृपालु हो जाता है। कलियुग में 'नाम' हर जगह छिपा है और प्रभु अपनी पूर्णसत्ता में सर्वव्यापक है। अमूल्य 'नाम' उसी के अंदर प्रकट होता है जो सत्गुरु के सामने आत्म-समर्पण कर देता है।)

गुरु के आशीर्वाद से व्यक्ति मौत से निर्भय हो जाता है और सफलतापूर्वक संसार सागर से पार ले जाया जाता है।

जमकालु निहाले सास आव घटै बेतालिआ।।
नानक गुर सरणाई उबरे हरि गुर रखवालिआ।। (1248)

(वह मौत को जीत लेता है और कभी नर्क नहीं जाता। हे नानक! गुरु की शरण से वह बच जाता है और हरि उसे अपनी शरण में ले लेता है।)

परमात्मा के द्वारा स्वीकार कर लिए जाने पर उस व्यक्ति के सभी कर्म पवित्र हो जाते हैं।

नानक नरकि न जाहि कबहूं हर संत हरि की सरणी।। (464)

जिन कउ पूरबि लिखिआ सेई नामु धिआइ।।
नानक गुर सरणागती मरै न आवै जाइ।। (53)

दुख हरत करता सुखह सुआमी सरणि साधू आइआ।।
संसारु सागरु महा बिखड़ा पल एक माहि तराइआ।। (691)

(ऐ नानक! समर्पण की दात के कारण वह कभी नर्क नहीं जाता। ऐ नानक! चुने हुए लोगों के अतिरिक्त अन्य कोई भी 'नाम' की भक्ति में लगा नहीं रह सकता। सत्गुरु के चरणों में समर्पण करने से जीव दोबारा आवागमन में नहीं पड़ता। बुराइयों को हरने वाले सबके मालिक को किसी साधु-संत की शरण में जा कर ही पाया जा सकता है। तब यह विकट संसार सागर शीघ्रता से पार हो जाता है।)

जब जीव सत्गुरु के सामने समर्पण कर देता है तो परमात्मा उसे अपने संरक्षण में ले लेता है और उसे सहज अवस्था (सदा प्रसन्नता) का वर देता है। उसके सभी डर और शंके समाप्त हो जाते हैं और वह अपने असली आत्म-स्वरूप को पहचान जाता है।

अध्याय 30

सत्गुरु के वचन

जब कोई व्यक्ति सत्गुरु के पास आता है तो उसे खुले दिमाग से आना चाहिये। क्योंकि उस व्यक्ति को यह पता होता है कि उसके अब तक किये गये सभी कर्मों, व्यक्तिगत अथवा सामूहिक, द्वारा उसे मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकी, इसलिए उसे उन सभी को छोड़ देना चाहिये और गुरु से आध्यात्मिक उपदेश देने की प्रार्थना करनी चाहिये।

उससे हिदायतें पा कर उसे उनका सख्ती से पूरा पालन करना चाहिये क्योंकि केवल ऐसा करने में ही सच्ची श्रद्धा छिपी होती है। सत्गुरु जो हुक्म देता है उसी को धार्मिक आदेश समझ कर धारण करना चाहिये चाहे वह बात इंसानी तर्क की कसौटी पर खरी उतरती हो या न। हमारी बुद्धि और तर्क भी सीमित हैं और जिन गहराइयों तक सत्गुरु जाता है, हम वहाँ तक नहीं पहुँच सकते। वह अपने आदेशों का आधार और कारण जानता है और एक पूरे ज़िम्मेवार फील्ड मार्शल की तरह अपना आदेश देता है।

इसलिए उसके आदेश का पालन हमें एक सच्चे सिपाही की तरह करना चाहिये और जो भी वह करने को कहता है, उस पर अमल करना चाहिये।

इस विषय में हाफिज़ कहते हैं :

बमै सज्जादह रंगीं कुन गरत पीरे मुग़ाँ गोयद।
कि सालिक बेख़बर न बवद ज़ राहो रस्मे मंजिल हा।

(अगर मुर्शिदे-कामिल चाहे कि अपनी नमाज़ के मुसल्ले को शराब में रंग दो तो रंग दो क्योंकि वह आध्यात्मिक रास्ते के मोड़-तोड़ों से अनजान नहीं है।)

विच शराबे रंग मुसल्ला, जे मुर्शिद फरमावे।
ओह है वाकफकार अजल दा, धोखा कदे न खावे।।

केवल ऊपरी तौर से सत्गुरु की जी – हजूरी से कभी कोई लाभ होने वाला नहीं। सत्गुरु जो कहता है, वह उस पर पूरा अमल देखना चाहता है क्योंकि शिष्य की भलाई उसी में है। बाइबल में बड़ा ज़ोर देकर कहा गया है :

अगर तुम मुझे प्यार करते हो, तो मेरा कहना मानो।

– जान 14:15 (बाइबल)

तुम 'शब्द' के अभ्यासी भी बनो और केवल उपदेश सुनकर न रह जाओ, नहीं तो तुम अपने आप को ही ठगोगे।

– जेमज़ 1:22 (बाइबल)

आगे बताते हैं कि आध्यात्मिकता की केवल मात्र बातें करते रहने से भी कुछ लाभ नहीं होता।

शास्त्री और फरीसी मूसा की गद्दी पर बैठे हैं .....लेकिन तुम उनके कामों की नकल मत करना, क्योंकि वे कहते हैं परन्तु करते नहीं।

– मत्ती 23:2 – 3 (बाइबल)

क्योंकि परमात्मा का साम्राज्य बातों में नहीं, बल्कि उसके सामर्थ्य में है। *– 1 कुरिन्थियो 4:20 (बाइबल)*

जैसे बिना आत्मा के शरीर एक शव होता है, इसी तरह से खाली बातें करना एक शव के समान है।

सेंट पॉल फरमाते हैं :

यदि मैं मनुष्यों और स्वर्गदूतों की बोलियाँ बोलूँ और प्रेम न रखूँ तो मैं ठनठनाता हुआ पीतल और झनझनाती हुई झांझर हूँ।

– 1 कुरिन्थियो 13:1

यही बात सत्गुरु के दर्शनों पर भी लागू होती है। इससे तुम्हें थोड़ी देर के लिए मानसिक टिकाव मिल सकता है लेकिन ज्यों ही तुम दूर चले जाते हो तो मन पुन: बिगड़ने लगता है और तन और आत्मा पर हावी हो जाता है।

अत: अमल करना और सत्गुरु के वचनों को जीवन में उतारना ही इस मार्ग पर काम आता है। सत्गुरु के शब्द दिल की गहराई में उतर जाते हैं और शायद ही कोई ऐसा होगा जो उन पर आचरण करने की न सोचे।

अगर तुम मुझ में बसते हो और मेरे वचन तुम में निवास करते हैं तो तुम जो माँगोगे वह तुम्हारे लिए कर दिया जायेगा।

मेरे पिता (परमात्मा) की शान इसी से होती है कि तुम बहुत सा फल लाओ। तब ही तुम मेरे शिष्य ठहरोगे। – जान 15:7 – 8 (बाइबल)

तुम उनके फलों से उन्हें जान लोगे। *– मत्ती 7:20 (बाइबल)*

पर जो अच्छी ज़मीन में बीज डालता है, वह है कि जो 'शब्द' को सुनता है और समझता है। उसी में फल भी लगते हैं – किसी में सौ गुने, किसी में साठ गुने और किसी में तीस गुने। *– मत्ती 13:23 (बाइबल)*

संसार की तुलना फसल से की गई है और फसल के समय आदमी फल के अतिरिक्त किसी की परवाह नहीं करता।

गुरु के वचनों को धर्म ग्रंथों का आदेश मानो और इससे जीवन के फल को अच्छी फसल लगेगी। *– मत्ती 13:30*

सत्गुरु के वचन सत्गुरु से अलग नहीं होते। दिल की गहराइयों में जो भावना होती है, उसी का रंग लेकर जुबान से लफ़्ज निकलते हैं। सत्गुरु शब्द में समाया हुआ होता है और उसके वचन उसी चीज़ का इज़हार (प्रकटाव) होते हैं जो उसके अंदर समाई होती है और वह है 'शब्द' यानी जीवन-धारा और जीवन-शक्ति। तो फिर दोनों (सत्गुरु और उसके वचन) एक दूसरे से अलग कैसे किये जा सकते हैं? निस्संदेह उसके वचन जिज्ञासुओं के दिल पर मार कर जाते हैं और जिस मिठास भरे दर्द से ऐसे जिज्ञासु पीड़ित रहते हैं, उसे कोई दूसरा नहीं जान सकता।

अंतरि पिआस उठी प्रभ केरी सुणि गुरबचन मनि तीर लगईआ।।
मन की बिरथा मन ही जाणै अवरु कि जाणै को पीर परईआ।।
(835)

(जैसे-जैसे परमात्मा को पाने की इच्छा ने ज़ोर पकड़ा तो सत्गुरु के वचन मेरे दिल को भेद गए। मन ही इस दर्द को जानता है, दूसरा कोई किसी के दर्द को क्या जाने?)

जैसे जैसे व्यक्ति सत्गुरु के वचनों को अधिक प्राथमिकता देता जाता है, वैसे ही उसे मिलने वाली दया-मेहर बढ़ती जाती है। जो कुछ सत्गुरु आज्ञा दे, उसका पालन करने में ही सत्गुरु की सच्ची भक्ति है। गुरु रामदास जी हमें बताते हैं कि सत्गुरु की चाह हमारे साथ सदा रहनी चाहिये, चाहे हम कुछ भी क्यों न कर रहे हों। सत्गुरु उसके वचनों में छिपा होता है और उसके वचन ही असली सत्गुरु होते हैं।

सतिगुरु बचनु बचनु है नीको गुरबचनी अंमृतु पावैगो।
जिउ अंबरीकि अमरापद पाए सतिगुर मुख बचन धिआवैगो।।
(1311)

गुर का बचन जपि मंतु।। एहा भगति सार ततु।। (895)
सतिगुर बचन कमावणे सचा एहु वीचारु।। (52)

(सत्गुरु का वचन पवित्र होता है और इसके द्वारा व्यक्ति को अमृत मिलता है। उसके वचनों को मानने से अमर जीवन मिल जाता है। सत्गुरु के वचनों को हमेशा याद रखो क्योंकि इसी में सत् और असली भक्ति छिपी हुई है। सत्गुरु के वचनों के अनुसार ही कार्य करो, इसी से सही ध्यान बनता है।)

सत्गुरु का 'शब्द' हमेशा दीक्षितों के साथ रहता है। दुनिया की कोई भी ताकत इसे छीन नहीं सकती, आग इसे जला नहीं सकती और पानी इसे बहा नहीं सकता। यह अविनाशी और अमर है। यह अनाथों का नाथ है और हर कदम पर हमारी संभाल करता है। यह सभी भ्रम और शंकाओं को जड़-मूल से नष्ट कर देता है। इसके निकट मौत का देवता (यमराज) भी नहीं आ सकता।

राम नामु गुरबचनी बोलहु।। संत सभा महि इहु रसु टोलहु।।
गुरमति खोज लहहु घरु अपना बहुड़ि न गरभ मझारा हे।। (1030)

(सत्गुरु के वचनों द्वारा 'राम-नाम' से जुड़ो। यह अमृत संतों की संगति में मिलता है। सत्गुरु की सहायता से अपने निजघर को तलाश कर लो। उसके बाद फिर आना-जाना नहीं रहेगा।)

निःसन्देह सभी लोग गुरवाणी सुनते और गाते हैं लेकिन उससे वही असली लाभ उठाते हैं जो गुरु के वचनों को मान कर अपना जीवन बनाते हैं।

सेवक सिख पूजण सभि आवहि सभि

गावहि हरि हरि ऊतम बानी ।।

गाविआ सुणिआ तिन का हरि थाइ पवै
जिन सतिगुरु की आगिआ सति सति करि मानी।। (669)

(जो शिष्य तथा सेवक सत्गुरु के पास आते हैं, वे सभी पवित्र धर्मग्रंथों का पाठ करते हैं परन्तु गुरवाणी का पाठ करना और सुनना केवल उनका ही स्वीकार होता है जो श्रद्धापूर्वक सत्गुरु की बात व हुक्म को मानते हैं और उसके अनुसार आचरण बनाते हैं।)

जो लोग बारंबार सत्गुरु से मिलते हैं, उनका उस के प्रति प्यार बढ़ता चला जाता है और जो लोग उसकी बात को सच मान कर उसके आदेशों का पालन करते हैं, वे प्रभु-प्रियतम के प्यारे हो जाते हैं।

सत्गुरु कैसा भी हुक्म क्यों न दे, उसका पालन अति उत्साह से होना चाहिये ताकि तुम 'शब्द' को पकड़ने योग्य बन सको जो तुम्हें वापस तुम्हारे निज-धाम में पहुँचा देगा।

गुरि कहिआ सा कार कमावहु।। सबदु चीन्हि सहज घरि आवहु।।
साचै नाई वडाई पावहु।। (832)
गुर का कहिआ जे करे सुखी हू सुखु सारु।।
गुर को करणी भउ कटीऐ नानक पावहि पारु।। (1248)

(सत्गुरु जो कहता है उसकी कमाई करो। शब्द-धुनि को पकड़ कर तुम अपने घर जाओ और नाम के द्वारा मान-सम्मान पाओ। गुरु के हुक्म की कमाई से तुम सुखों के सार को पा जाओगे और भवसागर से पार हो जाओगे।)

सत्गुरु की आज्ञा का पालन करना नितांत आवश्यक है क्योंकि ऐसा करने में ही शिष्य की भलाई है।

वैसे तो सत्गुरु से बहुत सारे लोग रोज़ाना मिलते हैं लेकिन सिर्फ

मिलना ही काफी नहीं है। मुक्ति पाने के लिये मन, वचन और कर्म से उसकी आज्ञा का पालन करना होता है।

सतिगुर नो सभु को वेखदा जेता जगतु संसारु।।
डिठै मुकति न होवई जिचरु सबदि न करे वीचारु।। (594)

(वैसे तो सत्गुरु को सारा संसार ही देखता है परंतु ऐसे मुक्ति नहीं होती, जब तक कि 'नाम' से सम्पर्क न किया जाये।)

सत्गुरु को सुरत-शब्द योग में निपुण होना चाहिये और वह इस योग्य हो कि हमारे अंदर 'शब्द' को प्रकट कर सके, उस शब्द को जो नीचे के नौ द्वारों में प्रकट नहीं होता बल्कि दसवें द्वार (दो भ्रूमध्य, आत्मा के ठिकाने पर) पर प्रकट होता है।

जब ऐसा सत्गुरु मिल जाये तो शिष्य का कर्तव्य है कि सच्चे हृदय से अपने आप को उसकी आज्ञा में रखे और जैसा वह चाहे वैसा अपने आप को ढाल ले। ऐसा करके उसे अपने मानव जन्म का पूरा लाभ प्राप्त होगा और वह अपने पूर्वजों एवं वंशजों की बड़ी भारी सेवा करेगा और फिर उसे किसी से डरने की भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

तिन का जनमु सफलु है जो चलहि सतगुर भाइ।।
कुलु उधारहि आपणा धंनु जणेदी माइ।। (28)

गुर कै भाणै जो चलै दुखु न पावै कोइ।।

गुर के भाणे विचि अंम्रितु है सहजे पावै कोइ।। (31)

(जो सत्गुरु का भाणा मानते हैं, उनका जीवन सफल हो जाता है क्योंकि वे अपने कुल को भी मुक्ति दिला लेते हैं और अपनी जननी को मान-सम्मान दिलाते हैं। जो सत्गुरु के कहने के अनुसार अपने आप को ढाल लेता है वह कभी किसी दुख से पीड़ित नहीं होता। गुरु के

भाणे में अमृत बरसता है जिसे वह आसानी से पा जाता है।)

जो शिष्य सत्गुरु की इच्छा (भाणे) पर जीवन गुज़ारता है, वह अमृत को पा जाता है और प्रभु के घर यानी निजघर में जा बसता है जिस की प्राप्ति उस का जन्म-सिद्ध अधिकार है।

मन मेरे सतिगुर कै भाणै चलु।।
निजघरि वसहि अंमृतु पीवहि ता सुख लहहि महलु।। (37)

(ऐ इंसान! सत्गुरु का भाणा मानो, निजघर में वास करो और अमर जीवन का आनंद लो।)

सत्गुरु की आज्ञा कौन समझ सकता है और उस पर पूरी तरह कौन चल सकता है? वही जिसके अंदर प्रभु की कृपा जागृत होकर काम करने लगती है :

जिसनो भए गोबिंद दइआला।।
गुर का बचनु तिनि बाधियो पाला।। (1348)

जो व्यक्ति सत्गुरु की आज्ञा का पालन कर के प्रभु का अनुभव पा लेता है, उस से महान इस दुनिया में कोई दूसरा नहीं है। इसलिये हमें 'नाम' को पाने की कोशिश करनी चाहिये और सत्गुरु की कृपा द्वारा उस से संपर्क स्थापित करना चाहिये।

मेरे मन नामु हरी भजु सदा दीबाणु।।
जो हरि महलु पावै गुर बचनी तिसु जेवडु अवरु नाहि किसै दा ताणु।। (861)

(ऐ मन! हमेशा प्रभु के 'नाम' का सिमरन कर। जो गुरु-वचन कमा कर निज-धाम को पा लेता है वही मनुष्यों में शिरोमणि है।)

'हरि-नाम' के फल इतने अधिक हैं कि उनको गिना नहीं जा सकता। जो 'नाम' के रंग में रंगा जाता है, वह हमेशा प्रभु-प्रियतम के गुण गाता रहता है। उसके सभी काम वक्त पर अपने आप होते रहते हैं।

जो वह चाहता है, वही होता है क्योंकि प्रकृति उसके इशारे पर नाचती है। वह सभी बीमारियों तथा बुराइयों से आज़ाद हो जाता है। उसमें से मैं-मेरी के सारे विचार निकल जाते हैं और वह कभी घमंड नहीं करता।

वह सारे द्वंद्वों जैसे-अमीरी-ग़रीबी, आराम-बे आराम, हर्ष-शोक और मशहूरी-बदनामी से ऊपर उठ जाता है क्योंकि वह शांत, स्थिर और सहज अवस्था में रहता है।

उस के ऊपर मन और माया का ज़हर असर नहीं कर सकता। दुनिया में रहते हुए भी वह दुनियादार नहीं रहता बल्कि चिंतारहित और निर्मोही हो जाता है। जहाँ चाहे, वह वहाँ मुक्त होकर विचरण करता है।

संसार के भ्रम और भुलावे उस पर कोई प्रभाव नहीं डालते। वह काल की सीमा से ऊपर चला जाता है, समय और काल के बंधन से मुक्त हो जाता है।

वह पुन: अमर जीवन पा लेता है और जिस निजघर या अदन के बाग से उसे परमात्मा की आज्ञा का उल्लंघन करने के अपराध में नीचे मृत्युलोक की तरफ देश निकाला दिया गया था, उसे वह फिर पा लेता है।

वह न सिर्फ अपनी आत्मा को बचा लेता है, अपितु 'नाम' की शक्ति से अनेक उन दूसरी आत्माओं को भी बचा लेता है जो उसके संपर्क में आती हैं और हाँ, उसके पूर्वज और वंशजों की आत्माएँ भी मुक्त हो जाती हैं।

जिस व्यक्ति को किसी संत-सत्गुरु के संरक्षण में आने का अवसर मिला वह वास्तव में धन्य है और इस तरह से वह जीवन के परमलक्ष्य और ध्येय को पा जाता है।

हमारे अन्य प्रकाशन

1. कृपाल वाणी (गद्य एवं पद्य) हिन्दी
2. कृपाल दया के सजीव सागर (प्रश्न उत्तर अगस्त 1974) हिन्दी
3. जीवन चरित्र संत कृपाल सिंह (उनके अपने शब्दों में) हिन्दी
4. आदर्श शिक्षाएं (जिल्द -1) हिन्दी
   (Teachings of Kirpal Singh का हिन्दी अनुवाद)
5. आदर्श शिक्षाएं (जिल्द -2) हिन्दी
   (Teachings of Kirpal Singh का हिन्दी अनुवाद)
6. Divine Melodies (कृपाल वाणी गद्य का अंग्रेजी अनुवाद) अंग्रेज़ी
7. 68 डीवीडीज़ / सीडीज़ का सैट जिस में 50 डीवीडी फिल्मों समेत सत्संग की, 6 डीवीडीज़ 280 हिन्दी सत्संगों की, 1 सीडी 8 पंजाबी सत्संगों की, 1 सीडी पुरातन महापुरुषों के शब्दों की, 2 सीडी 341 फोटोज़ की, 2 सीडी पाठी जी के विरह और प्रार्थना के शब्दों की, 2 सीडी पाठी जी के चेतावनी के शब्दों की, 2 सीडी भाई-बहनों के विरह और प्रार्थना के शब्दों की, 1 सीडी भाई-बहनों के चेतावनी के शब्दों की तथा 1 सीडी महाराज जी द्वारा लिखी आडियो कविताओं की शामिल हैं, तीन हज़ार रुपए में इस सभा से प्राप्त किया जा सकता है।